सच के आसपास



राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर के
आर्थिक सहयोग से प्रकाशित

नेगचार प्रकाशन
3 च-14, पवनपुरी, बीकानेर

नवनीत पाण्डे

सच के आस पास

SACH KE AASPAAS (Poetry)
by Navneet Pandey

Rs. 100/- Ed. 1998

Published by
NEGCHAR PRAKASHAN
3 Ch 14, Pawanpuri, Bikaner - 334003

सर्वाधिकार	:	सीमा पाण्डे
संस्करण	:	1998
मूल्य	:	एक सौ रुपये मात्र्
आवरण	:	अमित भारती, मुम्बई
प्रकाशक	:	नेगचार प्रकाशन 3 च 14, पवनपुरी, बीकानेर (राज.) 334003
मुद्रक	:	संन्तोष आफसेट, बीकानेर

मैं पूरी ताकत के साथ
शब्दों को फेंकना चाहता हूँ आदमी की तरफ
यह जानते हुए कि आदमी का कुछ नहीं होगा
मैं भरी सड़क पर सुनना चाहता हूँ वह धमाका
जो शब्द और आदमी की टक्कर से पैदा होता है
यह जानते हुए कि लिखने से कुछ नहीं होगा
मैं लिखना चाहता हूँ.......

केदारनाथ सिंह

अनुक्रम

समय की तितलियों को.....

सच के आसपास

रेत और हवा

हवा जब भागती है
भागती है रेत
हवा-रेत
रेत-हवा
गुथमगुथ-एकमेक
बताओ!
कौन हवा ?
कौन रेत ?

रेत के विस्तार में

रेत के विस्तार में
रहा निरंतर खोजता
एक और आदमी
रेत काँपी, हिली,उलटी
उगल दिए रेत ने
आदमी ही आदमी
सो रहे थे जाने कब से
रेत के आगोश में
रेत के विस्तार में ।

भविष्य की खातिर

तुम व्यर्थ ही
आशान्वित हो
यह बचा हुआ हिस्सा
भाए नहीं तो क्या
तुम्हें नहीं दूंगा
रखूंगा संभालकर
अपने भविष्य की खातिर ।

नमस्ते!

नहीं......नहीं
अभी समय नहीं है
मैं नहीं आ पाऊंगा
सॉरी यार
फिर कभी......
फिर किसी दिन देखेंगे
जमकर बैठेंगे
खूब बातें करेंगे
कितने अरसे से मिले हो
मुझे पता तो चला था
तुम यहां हो......
पर यहां हो
मालूम नहीं था
सब ठीक-ठाक तो हैं ना
अच्छा तो चलूं... जरा जल्दी में हूँ
नमस्ते!

लोगों के सामने

सिर्फ महफिलों में ही क्यों
ढूंढते हो तुम मुझे
अकेले में भी तो मिलते हैं हम
क्या सिद्ध करना चाहते हो
लोगों के सामने
लोगों की भीड़ में
जताते हो खुद को सबसे बड़ा हमदर्द
कहो तो सही!
कितने दर्द बांटे हैं
तुम्हारा यह स्वांग
समझ के बाहर है
कितना बदल जाते हो लोगों के सामने ।

मुलाकात

वह परेशान है,
उतावला है
मिलना चाहता है मुझसे
बचपन का मित्र है
मैं ढूंढ रहा हूँ
चेहरे पर सिर के बाल
छाती पर रीढ़ की हड्डी ।

छेद

रह गया छेद
सूनी दीवार पर

बरसों से गड़ी कील
उखड़ गई झटके से
ठोकरें खाने लगा
इधर-उधर फ्रेम खाली
बिखर-बिखर गये कांच
स्मृतियों की तस्वीर के

कह गया कितना कुछ
हवा का वह एक झोंका
किरकिरी सा रहा चुभता
दीवार में वह छेद एक..।

एक और नाव

समंदर आज है
सारा घर, आंगन
घर अब कहां है ?
समंदर–समंदर
समंदर में
डरी, सहमी, निस्तेज हजारों आंखें
तलाश रही हैं घर
शरीर बन गए हैं कई नाव
पहुंचाने को पार
पर कहां ?
बरसने वाले पैकेट
लपकने की होड़
क्या पूर देगी दौड़
पैकेट थामे हाथ
बनते जा रहे हैं नाव
नाव पर सवार है
पैकेट थामे एक और नाव ।

हे राम!

क्या नहीं किया मैंने
क्या नहीं दिया मैंने
अपना सब कुछ तो कर दिया होम
सब कुछ तो
क्या है-
पैरों की चाल
हाथों की ताकत
इच्छा की उड़ान
संकल्पों का परिणाम
फिर भी नहीं भूलते लोग
हर दिवस, सुबह-शाम
पत्थर को प्रणाम
हे राम! हे राम!



आस्था

इस अरअराती गहराती डराती सांझ से
चुका नहीं हूँ मैं
मेरी आस्था के कंगूरों म
आज भी जगमगाते हैं
सूरज, चाँद, तारे
मेरी जय–सरिता का उद्भव, बहाव
यहीं से होगा–होगा–होगा ।

सूखा पत्ता

किस काल के
न जाने किस काल में
वह हवा
उड़ा कर ले आई मुझे यहां
सूखा पत्ता
हां! मैं एक सूखा पत्ता
छोड़ आया पीछे
बहुत-बहुत पीछे
अपने, अपनेपन की
हरी होती डालियां
नहीं देख पाया
न ही देख पाया
वे हरी डालियां, हरी-हरी डालियां
आगत के गहन गर्त में
या शिखर पर
क्या है? क्या होगा?
नहीं देख पाऊंगा
न ही देख पाऊंगा
मैं जब हरा था
मुझे भी क्या देखा होगा किसी ने?

धूप

धूप सहृदयी
सह-चारिणी है
धूप ने हमेशा
अपनी तपन से मुझे
और निखारा है
आओ......!
धूप से कतराना नहीं
निखरना सीखें
निखार भी ऐसा
जिसमें किसी छाया की
छाया न हो
ऊपर-नीचे, आगे-पीछे
चारों ओर धूप हो
बस! धूप ही धूप हो ।

भीगना

बरसात हुई
पूरी तरह भीग गया मैं
पर तुम...!
बिल्कुल भी न भीगे
बहुत चाहा मैंने-तुम भीगो
चुल्लू में भर पानी भी फेंका-कई बार
पर तुम नहीं भीगे
छू भी न पाई कोई बूंद तुम्हें
मैं हैरान हूँ
ऐसा कैसे हो सकता है?
भरी बरसात में भी निपट सूखा
कोई कैसे रह सकता है?
हां, अब मैं जान गया हूँ
जानने के बाद
थोड़ा और भीग गया हूँ ।

कील

एक कील हथेली पर
दीवार पर अंगुली एक
रोज रूपती है
वर्तमान की चोटों से
क्षत-विक्षत भविष्य की
दीर्घ छायाएं
रोती हैं कुत्तों सी
डराती हैं भूतों सी
देखें! सच....
यही सच बचा है एक
तारों भरे आकाश में
बिजली कड़कती है
बूंदें बरसती हैं
दीवार से लहू
हथेली से रेत झरती है

ऑपरेशन

पिता! तुमने नहीं देखा
तुम्हारा ऑपरेशन हो चुकने के बाद
प्रियजनों, रिश्तेदारों के हाथों
अभी तक चल रहा मेरा ऑपरेशन
कैसे भरोसा दूं?
और कितनी बार?
कि तुम बिल्कुल ठीक हो ।
मैंने सब कुछ ठीक तरह से किया है ।

सिसकियां

हवा की धक्कामुक्की से खुले
दरवाजे की पल्लुओं की सिसकियां सुन
डर जाता हूँ
जब संभालने लगता हूँ
पल्लू, चौखट से जुड़े कब्जे
कुछ और
और
सिसकियां पाता हूँ ।

जो बचा सके

बहुत दिनों से सोच रहा हूँ
कुछ सोचना है
सोचकर लिखना है
इसलिए नहीं कि
सोचना आदत है
लिखना हॉबी
इसलिए कि
कहीं पढा था
जो रचेगा, वही बचेगा
और मैं सोच रहा हूँ
ऐसा रचाव
जो लिखा जा सके
मुझे बचा सके ।

नंगापन

संभोग
कितनी सुन्दर
शाब्दिक अभिव्यंजना से संवारा है तुमने
मेरी उत्पीड़ा को
मैं हूँ भोग
केवल भोग
जिसे हमेशा, जब जी चाहा
अपने ही तरीकों से भोगा है तुमने
गर्दन तक ढकी होने पर भी
ढूंढते-बताते रहते हो
मेरी देह का भूगोल
कहां? कहां? क्या है? कैसा है?
तुम विरुद बांचते आये हो
तुरंत बता देते हो
क्षमा करना!
मुझसे मत पूछना
बता नहीं पाऊंगी
तुम नंगे कैसे लगते हो ।

कविता

मस्तिष्क के गर्भ में
भावों का भ्रूण उपजा
भाषा ने दिए शब्द
समय ने दिए अर्थ
संवेदना-लय पगी अभिव्यक्ति को
दिशा दी कलम ने
कवि हृदय की कोख से
कविता यूं पैदा हुई ।

तुम्हारी कविता

कुछ भी लिख देना
तुम्हारे लिए यदि है कविता
तो मित्र!
क्षमा करना
मैं नहीं पढ़ पाऊंगा
तुम्हारी कविता ।

सबके पास हैं शब्द

उसके मुंह से निकला
सही समय और अवसर पर
एक शब्द
सबने कहा वाह!
क्या कविता है?
सबके पास हैं शब्द
पर कितनों के शब्द
बन पाते हैं कविता....।

वही तो है कविता

जब तुम्हारे और मेरे
ऊपर की रेखा
हो चुके एक
और उपजाए कोई अर्थ
शुरू हो जाए एक लय
अनुगूंज
बाहर-भीतर
जगाए भीतर को
रचाए बाहर को
झारे एक शब्द-शृंखला
वही तो है कविता ।

बच्चा समझ रहा है कविता

बच्चे को मिला है होमवर्क
याद करना कविता
बच्चा खेल रहा है
मां
प्यार से बुलाती है
समझाती है बच्चे को
गुनगुना कर सिखाती है कविता
मां गा रही है
बच्चा समझ रहा है कविता ।

पाश

वह देता है आदेश
निकलो बाहर
वह अपनी सांस से
मिटा देती है भाजक रेखा
और वह...
गूंगा हो जाता है ।

छांह

अपनी धरती छोड़
उन्मुक्त आकाश में उड़ता, बौराता
निकला था बीज
अपनी जमीन तलाशने, पलने, फलने
स्वजाति-धर्म-गुण सम्पन्न
एक विशाल पेड़ देख
उतर गया बीच राह उसकी छांह
एक नए विश्वास और उमंग से
पेड़ पोमाया-हंसा
बुदबुदाया-
अच्छा फंसा ।

आसमान

उसने आसमान देखा
और आसमान हो गया
धरती
एक बार भी न रोई
सिर्फ देखा-महसूसा-छाना
छा गया आसमान
सारा आसमान ।

संभावनाएं

अभी छोटा है
पर संभावनाएं मरी नहीं हैं
बायां नहीं तो .
दायां जरूर बिकेगा
एक का गृहपति मर गया है
दूसरा सम्पत्ति विवाद में फंसा है
हो सकता है
अगली बार जब तुम आओ
तो कहो–
वाह मित्र! कितना आलीशान बनाया है तुमने
अपना मकान ।

वह

उसकी जड़ कहीं नहीं है
न धरती में, न पानी में
फिर भी
पल-फल-फूल रहा है
और बांट रहा है सबको
हवा-प्रकाश और पानी
यह जानते हुए भी कि
उसकी हवा में
किसी और की हवा है
उसके प्रकाश में
किसी और का प्रकाश
उसके पानी में
किसी और का पानी
शहर का वट वृक्ष है वह ।

कद

न जाने कब
उठ गए उसके पैर
धरती से कुछ ऊपर
और–
मेरे न चाहने पर भी
उसने छोड़ दी मेरी अंगुली
हो गया अलग
"मैं बहुत छोटा दिखता हूँ ऊपर से"
वह बोलता है ऊपर से
मैं उसकी छाया ही देख पा रहा हूँ
पर सुन रहा हूँ बार–बार
"मैं बहुत छोटा दिखता हूँ ऊपर से"।

त्रिशंकु

माना–हमने गलती की
तुम्हें सर चढ़ाया
अपने कंधे बैठाया
पर क्या करते ?
इसके सिवा चारा न था
कोई दूसरा चमकीला तारा न था
तारा, जो दिखाता हमें
हमारे सपनों का एक बड़ा तारा
पर तुमने तो
निगल लिया खुद को ही
सूरज बनने की चाह में
त्रिशंकु
सूरज रहे ना तारा
अब क्या विचार है तुम्हारा
माना–हमने गलती की
तुम्हें सर चढ़ाया
इसलिए नहीं कि तुम!
हमें बौना कर दो
हम बौने
हा! हा! हा!
देखो! अच्छी तरह देखो!
तुम्हारी ही जमात के अन्य तारे
तुम से दूने चमक रहे हैं
तुम्हें देख रहे हैं–त्रिशंकु ।

तुम्हारा आसमान

बहुत छोटा है तुम्हारा आसमान
मेरी आकांक्षाओं-इच्छाओं से
भले ही घिरे हैं
घोर अपवादों और उपहासों से
मेरे लक्ष्य और सिद्धान्त
पर अब तो-
करने ही होंगे स्वीकार
तुम्हें मेरे व्यवहार
मेरे विचार
हां!
मैं अभी भी उसी पहली सीढ़ी पर खड़ा
तुम्हें पुकार रहा हूँ
जिसे तुम्ही अब दे रहे हो
सर्वोच्च की संज्ञा ।

हवा

मैंने कहा–कुछ बोलो!
वह बोली भी
पर उड़ा ले गई हम दोनों के बीच का संवाद
हवा!
हवा जो आई थी बाहर से
उसके होंठ हिल रहे हैं
गोया
वह अब भी बोल रही है,
कुछ कह रही है
पर कहां रुकती है, सुनने देती है
हवा!
यह बाहर की हवा ।

जीवन हरा है

हवा-प्रकाश-पानी
सब कुछ तो मिला
फिर भी हरा
नहीं रहा-हरा
पड़ गया पीला
जड़ हो गई जड़
नहीं
मुझे नहीं स्वीकार
हार
मैं दूंगा
अपनी आंखों का पानी
सांसों की हवा
अस्तित्व का प्रकाश
जीतेगा विश्वास
जीवन हरा है
न कभी मरता है
न कभी मरा है ।

मैं

मैं
कर सकता हूँ
अपनी मुट्ठी में बन्द
आग भी, पानी भी
नहीं होता भयभीत
झुलसने या टपकने से
क्योंकि मुझे पता है
हर झुलस में
कहीं छुपा है एक टपका
और हर टपके में
भरी है एक झुलस ।

चेहरा

मैंने देखा है अंधेरा
जानता हूँ अंधेरे को
इसीलिए
भागता हूँ अंधेरे से
नहीं चाहता अंधेरा
अंधेरे में खो जाता है चेहरा
चेहरा
मेरा, तुम्हारा, किसी का भी
इसी चेहरे के लिए तो आदमी
सोता है जागता है
रात-दिन भागता है
जीता है, मरता है
धुरी पर चलता है
अंधेरे का भूत
जब चेहरे पर उतरता है
अंधियाकर आदमी
आदमी से डरता है ।

मन करता है

मन करता है
लौट जाऊं वापस
दौड़कर पहुंचूं फिर वहीं
संभाल कर अपने को
देखूं, जानूं-
सूरज, हवा, समय को
और पुनः शुरू करुं अपनी यात्रा
रखूं पांव जतन से
अपने मनचाहे भविष्य में
इस अनचाहे वर्तमान को टलने के लिए ।

नींद में कविता

जब सोता हूँ रात को
नींद में आती है कविता
मैं जान लेता हूँ
यह है कविता
फिर भी
बोलती है कविता
मैं हूँ कविता
"मैं जानता हूँ"
जैसे ही मेरे होंठ खुलते हैं
गलबहियां डाल
चूम लेती है कविता
मैं रोमांचित
जैसे पहली बार बना पिता ।

बाहर

अगर रखोगे खुले हमेशा
दरवाजे और खिड़कियां
कैसे बचा पाओगे गर्द से धुंधलाता
घर का आईना
बच्चा अंगुली पकड़ कर
आना चाहता है घर से बाहर
तुम्हारे ही साथ पहली बार
क्या तुम दिखा सकते हो इसे ?
पूरी ईमानदारी से
जैसा है तुम्हारा बाहर
पहली बार ।

फूल

माना–
मैं नहीं खिला तुम्हारी तरह बाग में
न ही पला, बड़ा हुआ
नक्काशीदार गमलों की
सुगंध वाली माटी में
फिर भी
एक बार
सिर्फ एक बार
छूकर तो देखो
मैं भी हूँ तुम्हारे जैसा
एक ही है
मेरी-तुम्हारी
खुशबू और जाति
जंगल का ही सही
हूँ तो मैं भी फूल ।

आशीष

तुमने आशीषा
मैं सुखी और खुश रहूँ सदा
मैं कृतार्थ बावला सा
देखता भर रहा
अपने सर पर झुका
तुम्हारा नेह भरा हाथ
बिना यह जाने
तुम!
मात्र अपनी छद्‌मता के वाग्जाल में
मेरे यथार्थ की आंखें मींच रहे हो
झुकी हथेली की छाया में
चेहरा छुपाकर
मेरे अस्तित्व की धरती
खींच रहे हो ।

अस्तित्व

अपने समय में मैं हूँ
आलोचक नहीं मानते
उससे थोड़ा आगे हूँ कि पीछे
इस पर भी मतभेद है
वे लगे हैं मेरी सच्चाइयों के
छिलके उतारने में
गंध से
आंखों में छलक आए हैं आंसू
फिर भी लगे हैं कि लगे हैं
बिना यह जाने कि
छिलका-छिलका होने पर भी
मैं वही रहूंगा, जो हूँ
पूरे अस्तित्व के साथ
समय के भीतर भी-बाहर भी ।

तस्वीर

औरत की तस्वीर
मुखपृष्ठ पर छपी है
पर वह नहीं जानती
तस्वीर क्या होती है
वह हिलती है
तस्वीर की औरत नहीं हिलती
वह हंसती है
तस्वीर की औरत नहीं हंसती
उसकी आँखें फैल जाती हैं....
कांच तो नहीं है
क्या है यह ?

प्यास

अगर बुझ सकती है तुम्हारी प्यास
भर लेता हूँ ओक में
अपना सारा पानी
लगा देता हूँ तुम्हारे होठों से
पर भरोसा तो दो
फिर भी नहीं रहोगे प्यासे ।

यात्रा

वहां पहुंचने के लिए
उछला नहीं
चढ़ा जा सकता था
वहां से लौटने के लिए
कूदा नहीं
उतरा जा सकता था
उसने चढ़ना स्वीकारा
वहां पहुंच गया
उतरना नहीं
लुढ़क गया ।

गूंगा

मैं तोडूंगा सन्नाटा
भेदूंगा मौन
भर दूंगा तुम्हारे भीतर
अपने सारे स्वप्न
ओ! महानगर
चुनौती है तुम्हें
अब नहीं रहने दूंगा तुम्हें गूंगा ।

रोशनी

चलो! उठो!
बैठें कुछ देर अंधेरे में
वहां बैठकर देखें इस रोशनी को
और जानें–
क्या हम जहां थे
वह रोशनी ही थी?

उसी सवाल के साथ

वह सही रास्ते चल रहा है
फिर भी
बीच-बीच में रुक जाता है
अचकचाकर चारों ओर देखता है
पूछता है राहजनों से
यह रास्ता कहां जाता है?
जानकर कुछ दूर चलता है
फिर ठहर जाता है
अपने उसी सवाल के साथ
एक और राह-जन के सामने ।

रोशनी

चलो! उठो!
बैठें कुछ देर अंधेरे में
वहां बैठकर देखें इस रोशनी को
और जानें–
क्या हम जहां थे
वह रोशनी ही थी?

आँख

आँख......
किसकी आँख ?
क्यों आँख ? कहां आँख ?
लोग आँखों की बात तो करते हैं
पर आँखों से ही डरते हैं...... ।

तृष्णा

सबको हासिल हैं
अपने हिस्से की धरती
अपने हिस्से का आकाश
अपने हिस्से का पानी
अपने हिस्से की सांस
अपने हिस्से की आग
फिर भी चाहिए
और धरती
और आकाश
और पानी
और सांस
और आग
इस महाशून्य में ।

हम

आँखों की जगह आँखें हैं
फिर भी अंधे हैं
हाथों की जगह हाथ हैं
फिर भी लूले हैं
पावों की जगह पांव हैं
फिर भी लंगड़े हैं
दिमाग की जगह दिमाग है
फिर भी पागल हैं
हम
समय के सबसे बड़े सच हैं
फिर भी झूठे हैं ।

अगवानी

धरती पर उग रही हैं आँखें
दीवारों से उतर कर कान
पसर गए हैं हवा में
पानी में से निकल कर चेहरे
ढूंढ रहे हैं
आसमान में अपनी छाती
कुछ दीपक
जलाकर अंधेरों की बातियां
कर रहे हैं-हमारी अगवानी
"आइए चलें"!

शिव सो रहे हैं

शिव सो रहे हैं
जाग रहे हैं सांप
जाग रहा है नंदी
जाग रहा है, [illegible]
शिव सो
सो रहे हैं

इसी कतार में

की जा रही है हत्या
मेरे सामने
मेरे जीवन की
मैं देख-पहचान रहा हूँ हत्यारों को
एक-एक नाम
पढ़ सकता हूँ
पकड़-पकड़ा सकता हूँ एक-एक को
बचा सकता हूँ जीवन का जीवन
पर नहीं करता कुछ भी
बैठा हूँ चुपचाप
क्योंकि मैं भी तो खड़ा हूँ
इसी कतार में ।

सच के आसपास

धूप के बर्तन में से उठाकर
उसने दिए कुछ छांह के टुकड़े
और बोला उससे–
"यह लो उपहार मेरी ओर से
अब तुम्हें नहीं लगेगी गर्मी
नहीं आएगा पसीना
बहो हवा में, छू लो आसमान
जिसका सूरज
दबा है मेरी मुट्ठी में"
उसने लपेट लिया है खुद को
उन टुकड़ों में
और परोस रहा है यह झूठ
सच के आसपास ।

जगाने वाले दिन

उसकी नींद में
उगता है हर बार एक नया सूरज
एक नया दिन लिए
उन दिनों से बिल्कुल अलग
जिन में वह जागता है

वह जागना चाहता है
उन नींद वाले दिनों में
पर उसे सोने ही नहीं देते
जगाने वाले दिन ।

विश्वास

नहीं नाप सकता
आसमान किसी पैमाने से
नहीं भर सकता
समंदर किसी बर्तन में
नहीं कर सकता बंद
हवा किसी थैले में
नहीं उठा सकता
धरती अपने कांधे पर
नहीं छुपा सकता
आग किसी डिबिया में
फिर भी
मुझे है विश्वास
तुम लो परीक्षा
मैं हो जाऊंगा पास ।

वहां जीने के लिए

देखता हूँ आसमान में
एक और आसमान
धरती पर
एक और धरती
अपने भीतर
एक और मैं
जब चलता हूँ इस नई धरती पर
रहता हूँ नए आसमान की छांह में
मैं मर जाना चाहता हूँ यहां
वहां जीने के लिए ।

सारे सचःझूठ

वह पहली बार नहीं
आज अंतिम बार मरी है
उसकी देह
नहीं होगी कभी
अब इस आंगन में–घर में
अब नहीं सुनाई देगा कहीं
उसका मौन–गीत
अब नहीं छुएंगे उसके हाथ
कभी किसी के पांव
उसने नहीं देखी कभी
और न ही देखने आएगी
ड्राईंगरूम की दीवार पर टंगी
माला पहने अपनी बेपर्दा तस्वीर
उसने कल्पना भी नहीं की होगी
एक दिन सारे झूठ, सच बन जाएंगे
और सारे सच...
झूठ ।

फुंकार

रोज देखता वह नींद में
अच्छे–अच्छे दिन
अच्छी–अच्छी बातें
पर जब भी जागता
देखता–सुनता अपने बाहर–भीतर
सांपों की फुंकार
साफ महसूसता
अपने भीतर एक फुंकार ।

हमारी पीड़ाएं बिक गई हैं

पीड़ाओं से क्रीड़ा को ही
जिन्होंने बना लिया है शगल
उन्हें मत कोसो
वे नहीं समझेंगे
उन्हें अगर भनक भी लग गई
हमारी पीड़ा की
वे होंगे हमारे बीच
दुश्मन देश की खुफिया एजेंसी के
एजेण्टों की मानिंद
और ले जाएंगे चुराकर हमारी पीड़ाएं
भुनाएंगे उन्हें राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय बाजारों में
हमें पता भी नहीं चलता
हमारी पीड़ाएं बिक गई हैं
न जाने कहां-कहां...
किस-किस की
कितनी रोटियां
सिक गई हैं ।

लड़की

लड़की को नहीं सुहाता बाल बढ़ाना
वह किरच देना चाहती है इन सांपों को
वह नहीं चाहती
नाक छिदवाना, कान बिंधवाना
वह नहीं उठती बिस्तर से जल्दी
नहीं भरती नल से पीने का पानी
नहीं जाती रसोई में
न ही उत्तर देती है
मां की झिड़कियों का
वह नहीं डरती
पिता की फुफकारों
और मां के मौन से
उसने जान लिए हैं
अपने इर्द-गिर्द बुने जाते अंधेरों के रहस्य
लड़की, अब सिर्फ लड़की नहीं है
अपने साथ पलते, बड़े होते लड़के से
कहती है जब लड़की
लड़का हंसता है
लड़की उसका मुंह नोच लेती है ।

सब जानते हैं

सब जानते हैं
बड़े-बड़े शहरों में होते हैं
बड़े-बड़े मकान, बड़े-बड़े बाजार
बड़े मकानों में होते हैं
बड़े-बड़े कमरे
बड़ी-बड़ी सुविधाएं
बड़े बाजारों में होती हैं
बड़ी-बड़ी दूकानें, बड़ी-बड़ी चीजें

सब जानते हैं
बड़े मकानों में हैं
बड़े-बड़े लोग
बड़े-बड़े भोग
बड़ी-बड़ी बातें
बड़े बाजारों में हैं
बड़े-बड़े दूकानदार

बड़े-बड़े खरीददार
बड़े-बड़े सौदे

सब जानते हैं
बड़े मकानों, बड़े बाजारों
बड़े लोगों तक पहुंचने के लिए
होती हैं बड़ी-बड़ी सड़कें
बड़ी-बड़ी सड़को तक पहुंचाती हैं
बड़ी-बड़ी गलियां
बड़ी-बड़ी गलियों में पहुंचने के लिए
होती हैं
छोटी-छोटी गलियां

सब जानते हैं
पर सब नहीं रह सकते
बड़े शहरों में
नहीं बना सकते बड़े मकान
नहीं जा सकते बड़े बाजारों में
नहीं पहुंच सकते
बड़ी सड़कों पर
बड़ी गलियों में
क्यूंकि
सब कहां ढूंढ पाते हैं
छोटी गलियां ।

हमारे लिए क्या काफी है?

हमारे लिए क्या काफी है?
पैदा होते ही रोना
खाना, निकालना
बोलना, सुनना, सीखना
हमारे लिए क्या काफी है?
दिए गए नामों की लकीर पर
दी गई धरती पर
दिए गए घर-बेघर में
दिए गए रिश्तों के कुओं में
जीते जाना
हमारे लिए क्या काफी है?
दिए गए आदर्शों में
नहीं मालूम
उन्हें धूर्तता क्यों नहीं कहा गया
क्यों नहीं बना कमीनापन
कभी कोई आदर्श
हमें जो दिए गए हैं मसीहा
जो बताए गए हैं दानव
हमारे लिए क्या काफी है?

तुम कहते हो
कुछ नहीं बचेगा
बचेगा केवल शब्द
झूठ है....
सब हैं बचे हुए
बचा हुआ है जीवन
बचे हुए हैं जीवन के अवलम्ब
बचे हुए हैं हम
इन्हीं शब्दों में
इन्हीं शब्दों के धनुष से निकले
बाणों की शैय्या पर लेटे हैं हम
मरे हुए समय की
लहूलुहान जिन्दा सांसें लेते हुए
हमारे लिए क्या काफी है?

हम सब ब्रह्मराक्षस

सच ही कहा था किसी ने
ब्रह्मराक्षस हमें
हम! ब्रह्मराक्षस ही तो हैं
जो आज भी बैठे हैं बरसों से
बावड़ी की गहराई में
फर्क आया है तो बस यह कि
हो गए हैं महाब्रह्म
उतर गए हैं कई सीढ़ियां
और.... और नीचे
(कर रहे हैं साधना/बावड़ी सूखाने को)
बंद कर दिए हैं मजबूती से
बावड़ी को स्वच्छ जल पहुंचाने वाले
समस्त जल स्रोतों को
और रोक दिए हैं
अपने विवादास्पद-उलझे
मगर मान्यताप्राप्त सिद्धांतों के लोथों से
मृदु जल के निकासी मोखों को

आग

आग से सब डरते हैं
सब को जला देती है आग
पर मुझे नहीं
मेरा तो घर है आग
बस अंगीकार कर लो मुझे
मेरे घर आ जाओ
कभी नहीं जलोगे ।

हम प्यासे हैं, और पानी होते हुए भी हमारी यह प्यास बुझ नहीं पा रही है-"हम समय के सबसे बड़े सच हैं/फिर भी झूठे हैं।"

कोई रहनुमा ऐसा नहीं है जो सही रास्ता दिखा सके। शिव सो रहे हैं और साप जाग रहे हैं। हमारा दर्द बिक रहा है। हमारी सभी चीजें बाजार में फेंक दी गई हैं। व्यापार, व्यापार! हर जगह स्वार्थ के तराजू! फिर भी चारों ओर अंधेरा होते हुए भी कवि प्रकाश, उजाले के प्रति आश्वस्त है। और यही शुभ संकेत है।

नवनीत पांडे ने अपने पहले ही संग्रह में जो गंभीरता अपनायी है, वह प्रशंसनीय है। जैसा कि मैंने पहले कहा कि उनका अपना शिल्प है, बात कहने का अपना तरीका। रचनाए सोचने के लिए बाध्य करती हैं। उन्हें हल्के मूड के साथ पढ़ा-समझा नहीं जा सकता। कविता-तल में उतर कर ही उसकी गहराई का अंदाजा लगाया जा सकता है। सभी रचनाएं स्थूल से दूर सूक्ष्म की ओर आमुख हैं। छोटी कविताओं में सत्य का निरूपण करना काफी दुष्कर होता है, अर्थ व कसाव दोनों ही तरह। मैं सोचता हूँ कि लम्बी कविताओं से लघु कविताएं अधिक प्रभाव छोड़ती हैं। उनमें एक निश्चित सोच होता है, एक बिन्दु, एक अवधारणा जो पाठक को अपनी ओर आकृष्ट करता है। उनका प्रभाव स्थाई होता है। संकलन की कुछ रचनाओं में दुरूहता आ गई है। कवि को दुर्बोध से बचना चाहिए। इसका अर्थ यह नहीं कि ऐसी रचनाओं में अर्थ का अभाव है या शाब्दिक दुरूहता है। कवि शब्दों के आडम्बर से बहुत दूर है, और यह एक अच्छी बात है। जरूरत अमूर्तीकरण से बचने की है। कवियों को परामर्श देता हुआ एजरा पाउण्ड जैसा दुर्बोध कवि भी आगाह करता है- "अमूर्तीकरण से बचो।" (Go in fear of abstractions)। किसी कविता संग्रह में आठ-दस रचनाएं ऐसी हों जो मन के भीतर प्रवेश कर जाएं, जो सोचने को मजबूर कर दें, जो बोधगम्य हों तो इसे सकलन की सफलता मानी जानी चाहिए। मैं कवि के उज्ज्वल भविष्य के प्रति आश्वस्त हूँ। कवि स्वय अनचाहे वर्तमान और मनचाहे भविष्य के प्रति तत्पर है। जीवन में एक नए उजास के लिए प्रयत्नशील तो होना ही पड़ेगा।

योगेन्द्र किसलय